वित्तीय बाज़ार की हाल की घटनाएं और मौद्रिक नीति पर उनके निहितार्थ*

राकेश मोहन

एशिया क्षेत्रीय आर्थिक मंच में समापन भाषण करने हेतु आमंत्रित किए जाने पर मैं गौरवान्वित हूँ । भारत और अंतरराष्ट्रीय वित्त संस्थान (आइआइएफ) के बीच संबंधों का सिलसिला 1990 के दशक के प्रारंभिक दिनों से शुरू होता है । अतएव यह उचित ही है कि अंतरराष्ट्रीय वित्त संस्थान ने भारत से संबंधित प्रमुख मुद्दों पर बल देते हुए इस क्षेत्र और वैश्विक अर्थव्यवस्था पर धारणाओं एवं विचारों के औपचारिक आदान-प्रदान हेतु एक अवसर के रूप में एशिया क्षेत्रीय आर्थिक मंच की शुरुआत करने हेतु एक केन्द्र के रूप में मुंबई का ही चयन किया । इस मंच की कार्यवाहियों से मुझे पता चला है कि वैश्विक एवं क्षेत्रीय वित्तीय और पण्य बाज़ारों में हुई घटनाओं पर सामयिक रूप से ध्यान केन्द्रित किया गया है तथा वित्तीय प्रणाली और उदीयमान एशिया के प्रासंगिक मुद्दों का व्यापक रूप से समावेश किया गया है ।

पिछले दो महीनों में हमारे सामूहिक ध्यान का अधिकांश संयुक्त राज्य अमेरिका और यूरोप के वित्तीय बाज़ारों में व्याप्त अशांति तथा अमेरिकी सब-प्राइम बंधक संकट से उभरे खतरों के कारण साख बाज़ार के आत्म विश्वास में आई अचानक कमी की ओर केन्द्रित रहा है । यहां तक कि हर बीतने वाले दिन से इस दिशा में कार्यरत अन्तर्निहित शक्तियों के बारे में कुछ न कुछ जानकारी प्राप्त होती है - प्रयुक्त व्युत्पन्नियों का जटिल स्वरूप; संपार्श्विक जमानत का न होना अथवा हल्की, कमजोर जमानत पर अत्यधिक निर्भरता; वित्तीय बाजारों में व्याप्त जोखिमों का न्यूनानुमान; बड़ी वित्तीय संस्थाओं की संदर्भाधीन कुछेक ऋण लिखतों एवं व्युत्पन्नियों के प्रति आश्चर्यजनक रूप से अधिक ऋण जोखिम और संक्रमण की गति - मुझे लगता है कि हाल की इन घटनाओं के सूचना और विश्लेषण, दोनों ही दृष्टियों से संपूर्ण निहितार्थ को समझ पाने के पहले हमें काफी आगे जाना होगा । फलत: इस समय ऋण और साख, दोनों ही बाज़ारों में पर्याप्त अनिश्चितता व्याप्त है । बिल्कुल उचित रूप से विनियामक, मौद्रिक प्राधिकारी और वित्त मंत्रालय सभी इन घटनाओं से पैदा होने वाले जोखिमों को रोकने में

* 20 सितम्बर, 2007 को अंतरराष्ट्रीय वित्त संस्थान (आइआइएफ) के एशिया क्षेत्रीय आर्थिक मंच के उद्घाटन के अवसर पर डॉ. राकेश मोहन, उप गवर्नर, भारतीय रिज़र्व बैंक का समापन व्याख्यान । उक्त व्याख्यान तैयार करने में एम.डी. पात्र और इन्द्रनील भट्टाचार्य से प्राप्त सहायता के लिए उन्हें हार्दिक धन्यवाद ।

लगे हुए हैं। मैंने सोचा है कि मैं अपने संबोधन में इस अवसर का उपयोग इन घटनाओं के वास्तविक आचरण की विस्तृत व्याख्या के बजाए इस अशांति के स्वरूप को समझने का प्रयास करूं, ऐसा क्यों हुआ, कहां हुआ तथा केन्द्रीय बैंकों पर इसके निहितार्थ क्या होंगे । अपने शेष व्याख्यान में मैं कुछेक उन महत्त्वपूर्ण शक्तियों पर प्रकाश डालूंगा जिनके कारण हाल में इस प्रकार की घटनाओं में वृद्धि हुई, इस विषय पर केंद्रीय बैंकों की ओर से किस प्रकार की विशिष्ट प्रतिक्रियाएं हुईं तथा भविष्य में उनके समक्ष आने वाली कुछेक चुनौतियों का स्वरूप कैसा होगा ।

II. क्या हो रहा है ?

संभवत: पिछले तीन दशकों की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह रही है जिसे 'भारी नरमी' ('ग्रेट मॉडरेशन')का नाम दिया गया है - मुद्रास्फीति और उसके उतार-चढ़ाव में निरंतर गिरावट । एशियाई वित्तीय संकट वाली अवधि अर्थात् 1998-2007 तथा उक्त संकट के पहले वाली 30 वर्षों की अवधि (1970-97) के बीच तुलना करने से पता चलता है कि हाल की अवधि में विकसित अर्थव्यवस्था में मुद्रास्फीति (उपभोक्ता मूल्य सूचकांक) औसतन 1.9 प्रतिशत रही, जो पहले की अवधि वाली 5.8 प्रतिशत की दर से कम थी। इसी अवधि में विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में मुद्रास्फीति 31.0 प्रतिशत से घटकर 7.0 प्रतिशत हो गई । इसी कालावधि में भिन्नता के गुणांक के रूप में मापी जाने पर स्फीतिकारी अस्थिरता विकसित अर्थव्यवस्थाओं में 0.55 से घट कर 0.20 पर, विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में 0.54 से घट कर 0.32 पर आ गई । इसके परिणामस्वरूप औसत सांकेतिक ब्याज दरें (अमेरिकी डॉलर पर लाइबोर दरें) भी पहले की अवधि के 8.3 प्रतिशत से घट कर हाल की अवधि में 3.8 प्रतिशत हो गईं । इस विशेषता का प्रतिबिंबन वास्तविक ब्याज दरों में भी कुछ गिरावट के रूप में हुआ, जो 2.5 प्रतिशत से घट कर 1.9 प्रतिशत हो गईं । विश्व भर में सांकेतिक और वास्तविक ब्याज दरों में आई सुदीर्घकालिक कमी के कारण जोखिम का मूल्य-निर्धारण अधिकाधिक रूप में कठिन हो जाने के बावजूद उसके (जोखिम) प्रति रुझान में बढ़ोत्तरी हुई ।

वर्तमान संकट को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करने वाली हाल की वैश्विक गतिविधियों की दूसरी महत्त्वपूर्ण विशेषता है मौद्रिक नीति की भूमिका। वर्ष 2000 में प्रौद्योगिकी स्टॉक में कमी आ जाने के कारण प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं - अमेरिका, यूरो क्षेत्र और जापान द्वारा अत्यधिक मौद्रिक निभाव सहायता प्रदान की गई है - और अनुमान है कि अमेरिकी मुद्रा आपूर्ति का आधे से ले कर दो तिहाई हिस्सा अमेरिका के बाहर रुका हुआ है । कुल मौद्रिक राशियों में हुई वृद्धि उस वृद्धि दर से अपेक्षाकृत अधिक रही, जिसकी अब तक की वास्तविक आर्थिक वृद्धि के अनुपात में आशा की जा सकती थी । हालांकि मुद्रास्फीति को कम स्तर पर रोक रखा गया । वित्तीय बाज़ारों में प्रचुर अतिरिक्त नकदी निधि मौजूद होने के साक्ष्य हैं, जिसका पता अमेरिका और एशिया के बीच स्थूल असंतुलन से भी चलता है । फलत: मुद्रा के त्रुटिपूर्ण संरेखण (misalignments) और शुद्ध (कैरी ट्रेड), जोखिम के संपीडन, व्यापक रूप से निष्प्रभावी जोखिमों के त्रुटिपूर्ण मूल्य-निर्धारण और यहां तक कि कतिपय उभरती अर्थव्यवस्थाओं के संदर्भ में संपदा क्षेत्र के प्रति निहितार्थ वाली घटनाओं में पर्याप्त वृद्धि हुई है। प्रतिफल की निरन्तर तलाश तथा जोखिम के प्रति अधिकाधिक रुझान में एशिया के सुदृढ़ स्थूल आर्थिक कार्य-निष्पादन का भी योगदान रहा है । वास्तव में, 30 अगस्त से 1 सितम्बर 2007 तक की अवधि में जैक्सन हॉल में फेडरल रिज़र्व ऑफ कन्सास सिटी द्वारा आवास, आवास वित्त एवं मौद्रिक नीति पर आयोजित वार्षिक आर्थिक परिचर्चा में प्राध्यापक जॉन टेलर (टेलर नियम की प्रतिष्ठा वाले) ने यह तर्क दिया था कि वर्ष 2002-2006 के बीच में फेड ने अत्यधिक ढीली मौद्रिक नीति अपनाई थी ।

विश्व भर में अपनाई गई निभावपरक मौद्रिक नीति के साथ ही निरंतर कम मुद्रास्फीति के समुच्चय ने केन्द्रीय बैंकों और मौद्रिक नीति निर्धारकों में मुद्रास्फीति की दरों

और ब्याज दरों को अनिश्चित काल तक कम रखे रहने के प्रति अतिरिक्त विश्वास पैदा किया होगा, जिसके फलस्वरूप जोखिम का कम स्तर पर मूल्य-निर्धारण हुआ और इसलिए अतिरिक्त जोखिम उठाने की प्रवृत्ति बढ़ी । यह परिणाम पूर्व एशियाई देशों के निजी क्षेत्र के उधारकर्ताओं तथा बैंकों द्वारा उस समय अतिरिक्त विदेशी उधार लिए जाने की प्रवृत्ति के अनुरूप ही था, जब विनिमय दरों को अपेक्षाकृत स्थिर माना जाता था और इसलिए जोखिम के प्रति उनकी समझ कम थी । यह विडंबना ही लगती है कि मुद्रास्फीति और ब्याज दर, दोनों ही में स्थिरता के संबंध में अतिरंजित अपेक्षाएं पैदा करने वाली केन्द्रीय बैंकों की अनुभूत सफलता और मौद्रिक नीति की वर्धित विश्वसनीयता के फलस्वरूप जोखिमों का गलत मूल्य निर्धारण हुआ हो और इसलिए जोखिम उठाने की प्रवृत्ति में बढ़ोत्तरी हुई हो । तथापि, एक अन्य विचारधारा यह है कि केन्द्रीय बैंकों की सफलता या विफलता से अधिक प्रचुर मात्रा में चलनिधि की उपलब्धता के साथ-साथ स्थिरता के बारंबार आश्वासनों तथा ब्याज दरों के भावी मार्ग के बारे में बाज़ारों को दिए जाने वाले मार्गदर्शन बाज़ारों को जोखिम उठाने के लिए आमंत्रित कर रहे थे । फलत: यह विचारधारा इसके लिए उन केन्द्रीय बैंकों को उत्तरदायी ठहराती है, जो बाज़ारों को इस बात का अवसर प्रदान करने में विफल रहे कि वे नीति में आश्चर्यजनक तत्वों से विरत रहते हुए जोखिमों का निर्धारण कर लें । संभव है कि इस अवधि में बढ़े वैश्वीकरण के फलस्वरूप व्यापार योग्य माल की कीमतों को नियंत्रित रखा गया और इसलिए मुद्रास्फीति कम रही, अतिरिक्त चलनिधि के कारण प्रतिफल की तलाश में सीमा-पार से वर्धित पूंजी प्रवाह के साथ ही विश्व भर में आस्तियों की कीमतों में बढ़ोत्तरी हुई । सुलभ मौद्रिक नीति ने स्वयं ही प्रतिफल की उस तलाश को बढ़ाया होगा जिसके फलस्वरूप ऋण जोखिम के मूल्यांकन के मानकों में ह्रास आया । आस्ति-मूल्य में उतार-चढ़ाव से निपटने हेतु मौद्रिक नीति के उपकरणों तथा ऐसे उपकरणों की पर्याप्तता से संबंधित निर्णयों के उपयोग की वांछनीयता इस संबंध में एक अन्य प्रासंगिक कारक है, क्योंकि उस समय तक अधिकांश केन्द्रीय बैंकों ने इस मुद्दे का निराकरण नहीं किया था । जैसे ही अनुभूत या दृश्य स्फीतिकारक दबावों के प्रत्युत्तर में मौद्रिक निभाव की प्रवृत्ति में कुछ कमी आनी शुरू हुई, सब-प्राइम संकट से ये सुभेद्यताएं पूर्णत: उजागर हो गईं, क्योंकि विश्वास उठ गया, बाज़ार जड़ीभूत हो गए और निवेशकों एवं उधारदाताओं के बीच जटिल जोखिमपूर्ण आस्तियों तथा विन्यस्त व्युत्पन्नी उत्पादों का मूल्यांकन करने में उनकी असमर्थता के संबंध में आतंक व्याप्त हो गया । ऋण के प्रति विश्वास में आई कमी के कारण बैंक अपने उन तुलनपत्रेतर 'विशेष निवेश संस्थाओं' (एसआइवी) को ऋण प्रदान करने पर विवश होते गए जो उनकी पूंजी का उपभोग कर लेती हैं, जिससे अन्य उधारकर्ता ऋण से वंचित रह जाते हैं (रौबिनी 2007[1])।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि यह निभावपरक मौद्रिक नीति द्वारा उत्प्रेरित चलनिधि की प्रचुरता के साथ ही मुद्रास्फीति को कम करके कम वास्तविक एवं सांकेतिक ब्याज दर का संयोजन ही वर्तमान संकट का मूल कारण है। इस अर्थ में सब-प्राइम कारण होने के बजाय एक लक्षण है। तार्किक दृष्टि से दृष्टांत के रूप में घटती मुद्रास्फीति की पृष्ठभूमि में ब्याज दरों में कमी होने पर परिणाम बिल्कुल भिन्न हो सकता था; किन्तु मौद्रिक नीति में किसी प्रकार के निभाव की गुंजाइश नहीं थी और इसलिए अतिरिक्त चलनिधि नहीं थी ।

जहां कई एक टिप्पणीकारों और विश्लेषकों द्वारा इस प्रकार का विचार व्यक्त किया गया है, वहीं एक प्रभावी विपरीत विचार भी मुखरित हुआ है, जैसा कि एलन ग्रीनस्पान ने हाल ही में अपनी पुस्तक के विमोचन के अवसर पर एक साक्षात्कार में प्रतिपादित किया है (फाइनैन्सियल टाइम्स,

[1] रौबिनी नौरियेल (2007) ''दि रिस्क ऑफ ए यूएस हार्ड लैंडिंग एण्ड इम्प्लिकेशन्स फॉर दि ग्लोबल इकॉनॉमी एण्ड फाइनैन्सियल मार्केट्स'' अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष में विचार-गोष्ठी (www.imf.org पर उपलब्ध)।

17 सितम्बर, 2007)। वे तर्क देते हैं कि वास्तविक अर्थव्यवस्था की इस अद्भुत घटना का कारण किसी मौद्रिक नीतिगत उपाय के अलावा मुद्रास्फीति में आई यह अत्यधिक कमी भी हो सकती है । पहला, 1990 वाले दशक के उत्तरार्ध और इस दशक के हाल के दिनों तक अमेरिका में देखने में आया उत्पादकता में वृद्धि का वह लम्बा क्रम मन्दक मुद्रास्फीति का स्पष्ट रूप से एक महत्त्वपूर्ण कारक रहा है। दूसरा, वैश्वीकरण और चीन एवं भारत में एक बिलियन नए कामगारों के परिवर्धन से विश्वभर में वेतन वृद्धि में मन्दी आ गई और इसलिए मुद्रास्फीति भी मंद रही। जबकि वे इस बात से सहमत हैं कि दीर्घकालिक दरों में कमी से आवासीय कीमतों की दृष्टि से प्रारंभिक लाभ हुआ, तथापि वे इस बात से सहमत नहीं होते कि ये अपेक्षाकृत कम दीर्घकालिक ब्याज दरें कम पॉलिसी ब्याज दरों वाली विस्तारित अमेरिकी फेडरल नीति का कारण हो सकती हैं। इसके साक्ष्य के रूप में वह दीर्घकालिक ब्याज दरों पर उस समय इसका कोई भी प्रभाव न होने का उल्लेख करते हैं जब अल्पकालिक पॉलिसी ब्याज दरों में वास्तविक रूप से वृद्धि की गई थी । इसलिए प्रवर्धित दीर्घकालिक ब्याज दरों और फलत: उन्नत आवासीय कीमतों पर होने वाले मौद्रिक नीति के प्रभावों की सीमा के संबंध में अभिनिर्णय स्पष्ट है । यह जानना अपने आप में रोचक होगा कि क्या कम ब्याज दर व्यवस्था पूर्णत: न्यायोचित थी । आलोचक यह तर्क देते हैं कि फेड को यथाशीघ्र और त्वरित गति से दरें बढ़ाते हुए कठोर प्रयास करने चाहिए थे । इस पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए श्री ग्रीनस्पान को फाइनैन्सियल टाइम्स (17 सितम्बर, 2007) में यह कहते हुए उद्धृत किया गया है कि मुद्रास्फीति की दर अत्यधिक कम होने तथा ''इस आशय की मिथ्या पूर्व-धारणा कि हम पूर्णरूपेण स्वतंत्र हैं तथा हम पूरी समझ-बूझ रखते हैं'' को ध्यान में रखते हुए इस प्रकार का नीतिगत प्रत्युत्तर ''राजनीतिक व्यवस्था'' को स्वीकार्य नहीं होता ।

हमारे समक्ष उपस्थित होने वाला एक मुद्दा यह है कि यह हलचल साख बाज़ार में ही क्यों आरंभ हुई और उसके बाद वह मुद्रा बाज़ारों तथा ऋण बाज़ारों में इतनी तीव्रता से कैसे फैल गई ? व्यापक रूप से यह माना जाता है कि साख बाज़ार सूचना असममिति जैसी विशेषता से सम्पन्न होता है । उधारकर्ताओं के पास स्वयं अपनी ऋण गुणवत्ता के बारे में ऋणदाताओं की अपेक्षा काफी अधिक सूचना हुआ करती है और यह वही असममिति है जिसका परंपरागत रूप से यह आशय रहा है कि लेनदार को उधारकर्ता के साथ अनिवार्य रूप से चिरस्थायी संबंध रखने चाहिए, ताकि उसकी ऋण गुणवत्ता पर निरंतर रूप से निगरानी रखी जा सके । अतएव बैंकों को यह कार्य करने के लिए परंपरागत रूप से पर्याप्त संसाधनों का निवेश करना होता था । उन्हें ऐसा करने के लिए प्रोत्साहन प्राप्त हुआ करते थे, क्योंकि उन्होंने ऋण जोखिम अपनी बहियों में वहन कर रखे थे । हालांकि, कई देशों में बैंक ऋणों के प्रवर्तक और जोखिमों के वाहक होने के बजाय केवल ऋणों के प्रवर्तक तथा जोखिमों के वितरक बन बैठे, क्योंकि बैंकों की भूमिका के बारे में परंपरागत राय में हाल के वर्षों में पर्याप्त रूप से परिवर्तन आ गया । पहली बात, सूचना प्रौद्योगिकी की उपलब्धता के कारण सूचना संग्रह और उसके रख-रखाव की लागत में पर्याप्त रूप से कमी आ गई । इस प्रकार इस आशय का एक व्यापक विश्वास पैदा हो गया है कि छोटे उधारकर्त्ताओं, जो अलग-अलग क्षेत्राधिकारों में व्यापक तौर पर बिखरे हुए होंगे, की ऋण गुणवत्ता से संबंधित सूचना निर्वैयक्तिक, संपुटित, संसाधित की जा सकती है और बेची जा सकती है। दूसरी बात, इस प्रकार की प्रौद्योगिकी की उपलब्धता तथा इस विश्वास के कारण कि इस प्रकार की सूचना विन्यस्त आधार पर उपलब्ध ही है, पर्याप्त स्तर पर वित्तीय नवोन्मेष संपादित हो गया, जिसने निवेशक या जोखिम वाहक को उस अंतिम उधारकर्ता से क्रमिक रूप से अनिवार्यत: दूर कर दिया, जहां वास्तविक जोखिम निहित था । उस स्थिति में बंधक दलालों, बंधक कंपनियों, सोसाइटियों और उसी प्रकार के मध्यवर्तियों का समूचा समूह ही अपुष्ट ऋणों सहित अपनी बंधक आस्तियों को संपुटित करने तथा विशेष निवेश संस्थाओं (एसआइबी), प्रतिरक्षा निधियों तथा उसी प्रकार की अन्य

संस्थाओं सहित विभिन्न श्रेणी के निवेशकों को बेच देने में सफल रहा, जिनमें से अधिकांश विनियमित नहीं थे । इस गतिविधि के पीछे मार्गदर्शक सिद्धांत यह था कि ऋणपात्रता श्रेणी निर्धारण एजेन्सियों के लिए यह व्यवहार्य होगा कि उन लिखतों का श्रेणी निर्धारण करने के लिए निरंतर आधार पर पर्याप्त सूचना रखी जाए जिन्हें संपुटित किया गया है । निश्चित रूप से यह तर्क दिया जा सकता है कि यह कोई नयी घटना नहीं थी, क्योंकि बंधक पर आधारित प्रतिभूतियां (एमबीएस) और आस्ति पर आधारित प्रतिभूतियां (एबीएस) हमारे पास कुछ समय पहले तक मौजूद थीं तथा वे ऋण बाज़ार को किसी भी दुर्घटना के बिना निरंतर आधार पर चलनिधि उपलब्ध कराने में सफल थीं । शायद इसमें अंतर यह हो कि सरकार द्वारा प्रायोजित संस्थाओं (जीएसई) द्वारा संपुटित बंधक पर आधारित प्रतिभूतियों पर कुछेक अपेक्षाकृत सुप्रवर्तित मानदंड लागू हुआ करते थे, जिनसे इन लिखतों में अन्तर्निहित संभाव्य जोखिम आनुमानिक रूप से कम हो जाया करते थे ।

इन विचारों के फलस्वरूप मुद्दों के उस तीसरे समुच्चय का जन्म हुआ जो प्रभावी वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण से संबंधित है । क्या हाल के संकट ने उन्नत वित्तीय बाज़ारों की चूक को सुधारने की आवश्यकता के महत्त्व को रेखांकित किया है ? परंपरागत रूप में वित्तीय चौकसी ने बैंकिंग विनियमन पर अपेक्षाकृत अधिक बल दिया है। बैंक ऐसी अत्यधिक विशेष सुविधा वाली वित्तीय संस्थाएं होते हैं जो जमाराशियां रखने की हैसियत से जनता की धनराशि के प्रभावी न्यासी भी होते हैं। इसलिए इन्हें प्रभावी रूप से विनियमित और पर्यवेक्षित करना आवश्यक है ताकि बैंकिंग प्रणाली पर लोगों की आस्था बनी रहे। साथ ही, बैंकों की अत्यधिक जोखिम उठाने की प्रवृति से जमकर्ताओं की रक्षा करना भी आवश्यक है। दूसरी ओर प्रतिरक्षा निधियों में निवेश करने वाले ऊंची निवल हैसियत वाले व्यक्ति होते हैं जिन्हें इस प्रकार के संरक्षण की आवश्यकता नहीं होती । वे ऐसे सुविज्ञ निवेशक होते हैं जो बाज़ारों की सूचना दक्षता का उपयोग करने में समर्थ होते हैं और इसलिए उन्हें सूचना असममिति द्वारा निहित जोखिमों को समझने में समर्थ हेना चाहिए । हालांकि वर्तमान संकट इन निवेशकों के समक्ष उपस्थित कठिनाइयों से पैदा हुआ, जिन्होंने इन लिखतों में अन्तर्निहित संभाव्य जोखिमों का ध्यान रखे बिना ही सब-प्राइम से सम्बद्ध निवेशों में भारी मात्रा में निवेश कर रखे थे । इन लेन-देनों के मूल में कई ऐसी खराबियां रहीं हैं, जो अब सामने आ हैं। तथापि, हमारे लिए यह आवश्यक है कि ऐसे सभी अनाचारों के ब्यौरों से सार ग्रहण करें, जिनके फलस्वरूप वर्तमान स्थिति पैदा हुई तथा उस प्रोत्साहन ढांचे को प्रतिबिंबित करता है जिससे ये अनाचार पैदा हुए। ऐसी स्थिति में बैंक जमाकर्ता भी जोखिम में पड़ गए तथा जैसे ही सूचना सममितियां स्पष्ट होने लगीं तथा ऋण रेटिंगों को अपर्याप्त समझा जाने लगा, बाज़ार ठंडे पड़ गए, जिससे बैंकों के लिए नकदी हीनता की स्थिति पैदा हो गई तथा जमाकर्ता के विश्वास में कमी आ गई जिसके परिणामी प्रभाव से वित्तीय बाज़ार और मौद्रिक नीति भी नहीं बच पाए। बैंकों और बैंकेतर वित्तीय मध्यवर्तियों तथा अन्य तुलनपत्रेतर जोखिमों (एक्सपोज़र्स) के बीच संपर्क को बैंकिंग पर्यवेक्षकों द्वारा यथोचित रूप से मान्यता नहीं दी गई या उसे पंजीकृत नहीं किया गया ।

हाल की घटनाओं के संदर्भ में यह स्वीकार कर लेना महत्त्वपूर्ण है कि ऋण बाज़ार में संपार्श्विकों के संकट से निपटने के उद्देश्य से वित्तीय बाज़ारों के विविध खण्डों के माध्यम से जोखिम सूचना के प्रेषण की प्रक्रिया को बेहतर ढंग से समझ लिए जाने की आवश्यकता है । उधारदाताओं के पास उपलब्ध विशिष्टीकृत सूचना में से कितनी सूचना को सुव्यवस्थित, संपुटित किया जा सकता है तथा उसे ऋण रेटिंग के रूप में बाज़ारों को प्रेषित किया जा सकता है। प्रतिभूतिकरण के मूल में निहित सिद्धांत इस पर आधारित है कि उधारदाता के पास वह विशिष्टीकृत सूचना उपलब्ध हो जिसे प्रकटित किया जा सके तथा बेचे जाने योग्य आकारों में बाज़ार में अलग से बेचा जा सके । विन्यस्त वित्तीय उत्पादों के बाज़ार का एक विशाल अंश काउंटर पर बिक्री होता है । क्या इन उत्पादों को और अधिक

मानकीकृत किया जा सकता है, ताकि उनका लेन-देन एक ऐसे केन्द्र में किया जा सके जो निवेशक के दृष्टिकोण से महत्तर पारदर्शिता रखने में समर्थ हो ? क्या संपार्श्विकों के बेहतर बाज़ार मूल्य, विशेषत: उन स्थितियों में जहां संपार्श्विकों के बाज़ार मूल्य को बही में न अंकित किया गया हो, के संबंध में अधिक वस्तुपरक सूचना निर्मित किए जाने के बेहतर तरीके हैं, क्योंकि इस प्रकार की सूचना निरंतर आधार पर नहीं उपलब्ध हो सकती ? क्या इस प्रकार की कुछेक आस्तियों के बाज़ार मूल्य को बही में अंकित किए जाने की सीमाएं निर्धारित हैं, जिनके मूल्य अधिक बारंबारता के आधार पर उपलब्ध नहीं होते ?

आवासीय मूल्यों में परिवर्तन स्थानीय क्षेत्रीकरण और भूमि संबंधी कानूनों में परिवर्तन, स्थानीय क्षेत्रों में मांग और आपूर्ति के बीच संतुलन से लेकर मौद्रिक नीति में परिवर्तन तक के कारकों पर आधारित होते हैं । कोई ऐसी भूमि मूल्य या आवासीय मूल्य प्रणाली तैयार करना कठिन है, जो पर्याप्त रूप से इतनी अधिक बारंबारता वाली हो कि उसे रेटिंग या उसके ही जैसी व्यवस्था के माध्यम से शीघ्रतापूर्वक प्रेषित किया जा सके । हालांकि, भूमि मूल्य-निर्धारण प्रणालियों में सुधार, मोचन-निषेध, दिवाला और पुनर्वास संबंधी कानूनों और कार्यविधियों की कार्यपद्धति में सुधारों की दृष्टि से इनमें सुधार की परिकल्पना की जा सकती है । यदि संपार्श्विक का मूल्य इस रूप में विक्रेय रखना है कि वह प्रेक्षणीय हो और फलत: उस सूचना की दृष्टि से व्यवस्थापन के प्रति ग्रहणशील हो जो कालांतर में पारदर्शी हो सके, तो इस प्रकार की प्रक्रियाओं का कुशल रूप में कार्य करना तथा कानूनी प्रणाली का कार्य करना आवश्यक होता है । जब संपार्श्विक में निहित आनुमानिक मूल्य न तो प्रेक्षणीय हो और न ही वसूली योग्य हो तो प्रतिभूतिकरण बाज़ार ध्वस्त हो जाते हैं और यही वह स्थिति है जो आज बाज़ार में पैदा हो गई लगती है ।

वर्तमान वित्तीय बाज़ार के संकट से प्राप्त होने वाली शिक्षा दोनों ही प्रकार की है । एक ओर बाज़ार का नवोन्मेष वस्तुत: वित्तीय बाज़ारों को उन लोगों के करीब लाने में सहायक हुआ है जिन्हें ऋण की आवश्यकता है और जिन्हें इसके पूर्व वह प्राप्त नहीं हो पाता था । सब-प्राइम उधारकर्ताओं के साथ जुड़ी समस्त समस्याओं के बावजूद यह स्वीकार किया जाना आवश्यक है कि इस बाज़ार से लगभग 10 मिलियन उधारकर्ता लाभान्वित हुए तथा वे आवास वित्त पाने में समर्थ हुए, जो इसके पूर्व संभव नहीं माना जाता था । इन उधारकर्ताओं के लगभग 20 प्रतिशत लोगों के दोषी और कठिनाई से गुज़रने वाले बताए जाने के बावजूद अब भी इसका अर्थ यही है कि लगभग 8 मिलियन लोग इस बाज़ार से स्पष्ट रूप से लाभान्वित हुए हैं । दूसरी ओर जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा वे इस प्रकार के मुद्दों की ओर ध्यान आकर्षित करती हैं जो उस समय उठ सकते हैं जब नवोन्मेष की गति और प्रोत्साहन के ढांचे में इस प्रकार के दोष विद्यमान हों कि उनसे उस सूचना को एकत्रित करने तथा उसका व्यापारीकरण करने में कदाचार की घटनाएं हों और आंतरिक कठिनाइयां पैदा हों, जो शायद अब तक इस प्रकार के व्यापारीकरण के प्रति ग्रहणशील नहीं हैं ।

हमारे दृष्टिकोण से हमारे लिए उन सकारात्मक योगदानों को स्वीकार करना आवश्यक है, जो वित्तीय मध्यस्थता की कार्यकुशलता को बढ़ाने के लिए वित्तीय नवोन्मेष करते हैं । इसके साथ-साथ रिज़र्व बैंक विदेशी, सार्वजनिक, निजी और सहकारी बैंकों के साथ ही सम्बद्ध गैर- बैंकिंग संस्थाओं में स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए विद्यमान अभिशासन मानकों, जोखिम प्रबंधन प्रणालियों तथा प्रोत्साहन के ढांचों को ध्यान में रखते हुए एक गतिशील विन्यास में उपयुक्त सुरक्षोपायों पर विचार करता है । समग्र रूप से इन क्रमिक किन्तु सतर्क नीतियों ने वित्तीय प्रणाली की कार्यकुशलता और स्थिरता दोनों ही में योगदान किया है तथा स्थूल स्थिरता के परिवेश में वर्तमान वृद्धि को गति प्रदान की है ।

III. मौद्रिक प्राधिकारियों की प्रतिक्रिया

वित्तीय बाज़ारों में हुई वर्तमान घटनाओं से जो एक मुख्य प्रश्न उभरा है वह इस प्रकार के संकट के संदर्भ में

मौद्रिक प्राधिकारियों की भूमिका से संबंधित है । यह मुद्दा केन्द्रीय बैंकिंग से जुड़े हम सभी लोगों के लिए चिंता का विषय है । पिछले एक या दो दशक से ऐसा लगता है कि केन्द्रीय बैंकों का ध्यान उन अधिक जटिल उत्तरदायित्वों की ओर अपेक्षाकृत कम होता जा रहा है, जिन्हें वे परंपरागत ढंग से निभाते रहे हैं । इस मुद्दे पर काफी कुछ लिखा जा चुका है, प्रथाओं की दृष्टि से काफी कुछ बदल गया है और कुछेक देशों में केन्द्रीय बैंकों को अपेक्षाकृत विशुद्ध मौद्रिक प्राधिकारी बनाने के लिए विनियामक ढांचे को ही परिवर्तित कर दिया गया है । इस विचारधारा के अनुसार केन्द्रीय बैंकों को व्यापक रूप से मुद्रास्फीति को कम और स्थिर रखने पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए और यह कार्य करते हुए वित्तीय स्थिरता में भी योगदान करना चाहिए । हार्वड के अर्थशास्त्री केन्नेथ रोगॉफ को उद्धृत किया जाए तो ''वास्तव में कई अर्थशास्त्री यह मानते हैं कि केन्द्रीय बैंकरों को एक ऐसे सामान्य नियम को कार्यान्वित करने हेतु कार्यक्रमबद्ध कम्प्यूटर द्वारा पूर्णरूपेण प्रतिस्थापित किया जा सकता है जो उत्पादन और मुद्रास्फीति के प्रत्युत्तर में ब्याज दरों को समायोजित कर देता हो । किन्तु जहाँ (यह) विचारधारा सैद्धांतिक रूप से कठोर है, वास्तविकता वैसी नहीं है'' (बिज़नेस वर्ल्ड, 17 सितम्बर, 2007) । यद्यपि कुछेक केन्द्रीय बैंकों जैसे कि अमेरिकी फेडरल रिज़र्व को वृद्धि को बढ़ावा देने का सुस्पष्ट अधिदेश प्राप्त है, हाल के दिनों में कई चिंतक यह तर्क देते दिखाई देते हैं कि मुद्रास्फीति पर नियंत्रण से वृद्धि को स्वत: बढ़ावा मिलेगा और कि केन्द्रीय बैंकों के लिए केवल इसी उद्देश्य पर ध्यान केन्द्रित करना बेहतर होगा।

वर्तमान संदर्भ में केन्द्रीय बैंकों ने क्या किया है, इसका परीक्षण करना ज्ञानप्रद होगा। वित्तीय बाज़ारों में हुई हाल की घटनाओं के प्रति केन्द्रीय बैंकों की प्रतिक्रिया से यह पता चला है कि अनवरत सुधारों के एक अंग के रूप में केन्द्रीय बैंकों को प्रदत्त विधायी अधिदेश के होते हुए भी वित्तीय स्थिरता के प्रति सरोकार को सर्वोपरि महत्त्व प्राप्त हो सकता है । यह इस तथ्य से स्पष्ट है कि प्रारंभ में केन्द्रीय बैंकों ने अपनी प्रतिक्रिया ब्याज दर में कटौती का माध्यम अपनाने के बजाय विशेष सुविधाओं के माध्यम को अपनाते हुए चलनिधि बढ़ाकर तथा संपार्श्विक हेतु पात्र प्रतिभूतियों का विस्तार करते हुए व्यक्त की । केन्द्रीय बैंकरों को शामिल करते हुए विविध मंचों पर किए गए विचार-विमर्शों से वृद्धि को संरक्षित करने के लिए अन्य प्रकार की कार्रवाइयों के प्रति उनकी उत्सुकता का पता चलता है । जैसा कि हम सब जानते हैं कि अमेरिकी फेडरल रिज़र्व इस सप्ताह में वृद्धि और वित्तीय स्थिरता के हित, दोनों ही को बढ़ावा देने के उद्देश्य से ब्याज दर में कमी करने की दिशा में और आगे बढ़ा है और इंग्लैंड के प्राधिकारियों को जमाकर्ताओं को उनकी जमाराशियों की सुरक्षा के संबंध में निर्बंध गारंटी प्रदान करते हुए एक विशिष्ट संस्था को चलनिधि भी उपलब्ध करानी पड़ी । तदनुसार यह स्पष्ट होता जा रहा है कि केन्द्रीय बैंकों को निश्चित रूप से मुद्रास्फीति को लक्ष्यांकित करने के अलावा भी एक भूमिका निभानी होती है । स्पष्ट रूप से केन्द्रीय बैंकों के लिए वृद्धि और स्थिरता, दोनों ही महत्वपूर्ण होती हैं ।

जब संकट का सामना करना होता है, तो अंतिम उपाय वाले ऋणदाता (एलओएलआर) की उनकी भूमिका में तथा वित्तीय स्थिरता के संरक्षक के रूप में उनके उत्तरदायित्वों का निर्वाह करते हुए उन्हें निश्चित रूप से ऐसे कार्य करने आवश्यक हो जाते हैं जो और भी जटिल हों । क्या केन्द्रीय बैंकों को केवल खुले बाज़ार के परिचालनों के ही माध्यम से प्रणालीगत चलनिधि उपलब्ध कराते हुए पूरी प्रणाली के लिए अंतिम उपाय वाले ऋणदाता होना चाहिए या फिर उन्हें उन अलग-अलग वित्तीय संस्थाओं को भी चलनिधि उपलब्ध करानी चाहिए, जिन्हें शोधक्षम किन्तु चलनिधि-रहित माना गया हो ? यदि उनके पास अलग-अलग संस्थाओं से संबंधित सूचना ही नहीं होगी तो वे इस प्रकार के निर्णय कैसे करेंगे ? क्या वे विनियमन और पर्यवेक्षण के वर्तमान उत्तरदायित्वों के बिना अपने पास इस प्रकार की विस्तृत सूचना रख पाएंगे ? यह मुद्दा असममिति सूचना के अस्तित्व की दृष्टि से मूल आस्ति पर आधारित प्रतिभूतियों के

संपार्श्विक के मूल्य से संबद्ध सूचना की पर्याप्त पारदर्शिता की समस्या से अलग नहीं है ।

बैंक और वित्तीय संस्थाएं विशिष्ट रूप से अत्यधिक सुविधा प्राप्त संस्थाएं हैं, इस प्रकार उनकी शोध-क्षमता से संबंधित निर्णय उनकी आस्तियों के उस समय के मूल्यांकन पर आधारित होते हैं जब कठिनाइयां पैदा होती हैं । वर्तमान मामले में बैंकों ने संस्थाओं की एक शृंखला के माध्यम से ऐसी प्रतिभूतियों में निवेश किए हैं जिनके मूल्य संदिग्ध हैं। अंतिम उपाय वाले ऋणदाता के रूप में चलनिधि सहायता प्रदान करते समय केन्द्रीय बैंक उन संस्थाओं की शोध क्षमता के बारे में निर्णय कैसे करेगा जिन्हें वह चलनिधि उपलब्ध करा रहा है ? जैसे-जैसे केन्द्रीय बैंकों की उपयुक्त भूमिका को अधिकाधिक मान्यता और समझदारी का आधार प्राप्त होता जाएगा, यह संभव है कि उसके फलस्वरूप केन्द्रीय बैंकों की कार्य-पद्धति के बारे में और अधिक पुनर्चिंतन होगा । एक विचारणीय मुद्दा है वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण का उस मौद्रिक नीति से पृथक्करण, जो वर्तमान संकट के संदर्भ में अप्रभावी एवं अपर्याप्त चौकसी का कारण हो सकती है । एक विचार यह है कि बैंकों द्वारा मौद्रिक प्राधिकारी और बैंकिंग पर्यवेक्षण के प्रभारी विनियामक निकाय, दोनों ही को रिपोर्ट किए जाने के कारण सूचना असममिति की समस्या और अधिक गंभीर बन गई हो ।

केन्द्रीय बैंकों के विकास का पुनरीक्षण करते समय हम उन निरंतर विकासपरक परिवर्तनों तथा अलग-अलग देशों में उनके कार्यों में विद्यमान अंतरों से विस्मित हो जाते हैं, जिनसे वे पिछले कुछ समय में गुजरे हैं । पैदा होने वाली परिस्थितियों के अनुरूप उनके कार्य में प्राय: निरंतर परिवर्तन होते रहें हैं । वास्तव में वित्तीय अस्थिरता की घटना ही वह कारण है जिसके फलस्वरूप कुछेक केन्द्रीय बैंकों का गठन हुआ, जिनमें सर्वाधिक उल्लेखनीय है 1907 में संयुक्त राज्य में आए वित्तीय संकट के बाद अमेरिकी फेडरल रिज़र्व की स्थापना । इस प्रकार यह जानना रोचक होगा कि वर्तमान संकट के परिणामस्वरूप चिंतन का स्वरूप कैसा होगा । विचारपूर्ण वित्तीय प्रेस में बहुत कुछ पहले से ही लिखा जा रहा है और काफी कुछ अभी लिखा जाने वाला है ।

हम उस संक्रमण और उसकी गति के खतरे को भूलना आरंभ कर चुके हैं जिसके साथ वह घटता है । वर्तमान घटनाएं जो वित्तीय बाज़ार के अपेक्षाकृत एक छोटे से खंड, अर्थात् सब-प्राइम बंधक खंड से आरंभ हुई थीं, महाद्वीपों के पार तक फल गईं । इसी प्रकार किसी एक वित्तीय संस्था में उठने वाली समस्याओं के फलस्वरूप अन्य संस्थाओं में भी वैसी ही समस्या पैदा होने का संदेह होने लगा, जिसके कारण बैंकों से जमाराशि वापस लेने की दौड़ शुरू हो जाती है । बैंकों, वित्तीय संस्थाओं और वित्तीय बाज़ारों का सहज संचालन महत्त्वपूर्ण रूप से पारदर्शी सूचना की उपलब्धता के साथ-साथ निष्ठा एवं विश्वसनीयता पर निर्भर करता है । इसलिए वित्तीय स्थिरता बनाए रखने में केन्द्रीय बैंकों की तर्कसंगत भूमिका के फलस्वरूप अनिवार्य रूप से ऐसी गैर-परंपरागत कार्रवाइयां करनी पड़ सकती हैं, जो उस समय वित्तीय स्थिरता को निश्चित रूप से बनाए रखती हैं जब उसके विपरीत स्थिति पैदा होने की संभाव्यता विद्यमान होती है । वर्तमान संकट में जो सर्वाधिक ज्ञानप्रद बात है वह यह है कि छोटी समस्याओं या छोटी संस्थाओं में पैदा हुई समस्याओं के कारण संसर्ग के माध्यम से वित्तीय अस्थिरता पैदा हो सकती है । इस संदर्भ में पिछली एक सदी में बहुत अधिक परिवर्तन हुआ हो ऐसा नहीं लगता । 1907 का वित्तीय आतंक जो कई महाद्वीपों तक जा पहुँचा था, न्यू यार्क की एक अपेक्षाकृत छोटी वित्तीय संस्था दि निकरबॉकर ट्रस्ट कंपनी से आरंभ हुआ था[2] । यह जरूरी नहीं है कि प्रणालीगत जेखिम की शुरुआत किसी ऐसी बड़ी संस्था के असफल होने से ही होती हो, जिसके असफल होने की संभावना न के बराबर रहती है।

[2] ब्रून राबर्ट एफ. और सीन डी. कार (2007) ''दि पैनिक ऑफ 1907, लेसन्स लर्न्ड फ्रॉम दि मार्केट्स परफेक्ट स्टार्म'', जॉन विली एण्ड सन्स, न्यू जर्सी

IV. भविष्य का मूल्यांकन

इस परिस्थिति में वर्तमान वित्तीय बाज़ार की अशांति की संभाव्य उत्पत्ति और भविष्य के लिए उसके निहितार्थ के मिश्रित मूल्यांकन हुए हैं । एक स्तर पर संक्रमण के विस्तार पर पर्याप्त चिंता हो रही है, पहली शक्ति (लीवरेज) के स्तर को देखते हुए और दूसरी उन संस्थाओं, के स्वरूप के कारण जिन्होंने शक्ति का निर्माण किया है । दूसरे स्तर पर एक विचार यह है कि यह अशांति ऋण बाज़ार तक ही सीमित रहेगी तथा उपभोक्ता व्यय और समग्र आर्थिक वृद्धि पर इसका प्रभाव मंद होगा, क्योंकि उदाहरण के तौर पर विशेष सुविधा प्राप्त बंधक पर आधारित प्रतिभूतियों को उनकी परिपक्वता तक रोक रखे जाने तथा आपात् स्थिति में बेच न दिए जाने पर ऋणपात्रता अक्षुण्ण रहेगी ।

पहला, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के मूल्यांकन के अनुसार सुदृढ़ वैश्विक वृद्धि का समर्थन करने वाले मूलभूत तत्वों के कारण इस अशांति के प्रणालीगत परिणामों के प्रबंधन योग्य रहने की संभावना है । ऋण जोखिमों का पुनर्मूल्य-निर्धारण, जो जारी है, एक अच्छा सुधार है और उसका परिणाम बाज़ार की और अधिक गंभीर विफलता के रूप में नहीं आना चाहिए । अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष को आशा है कि कई एक केन्द्रीय बैंकों द्वारा हाल ही में की गई त्वरित कार्रवाई के कारण ऋण अनुशासन की पुनर्स्थापना को यह सुनिश्चित करने में सहायक होना चाहिए कि समायोजन प्रक्रिया व्यवस्थित रूप से संपन्न हो जाए । दीर्घकालिक निवेशक इस विचार का समर्थन करते लगते हैं । गुणवत्ता (अमेरिकी खज़ाना) और वैश्विक ईक्विटी निधि की ओर अनवरत प्रयाण से वैश्विक अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ मूलभूत तत्वों में निरंतर निष्ठा के संकेत प्राप्त होते हैं ।

दूसरा, हाल की घटनाओं के निहितार्थ वर्धित बाज़ार अनुशासन और वित्तीय बाज़ारों के अपेक्षाकृत कठोर विनियमन का संकेत करते हैं । ऐसे निवेशकों द्वारा, जो संपार्श्विक कर्ज़ देयताओं (सीडीओ) और संपार्श्विक ऋण देयताओं (सीएलओ) की ऋण रेटिंग पर निर्भर होते थे, अन्य बाज़ारों में रेटिंग के मूल्य पर प्रश्नचिन्ह लगाए जाने की संभावना है। इसके अलावा विशेष सुविधा अदायगी दे कर अधिकारमुक्त करने (बाई आउट) की गतिविधि के समाप्त कर दिए जाने की संभावना है । इससे जहां ईक्विटी के मूल्यांकन के बारे में चिंता हो सकती है, वहीं यह आशा की जाती है कि जब तक कॉर्पोरेट लाभप्रदता सुदृढ़ बनी रहती है, इस प्रकार की चिंताएं अंततोगत्वा कम होती जाएंगी। इसके अतिरिक्त यह तर्क दिया जाता है कि कैरी ट्रेड, जो वित्तीय प्रवाह का एक स्रोत रहा है, में कमी आ सकती है या वह अचानक घट सकता है तथा इससे वैश्विक वित्तीय स्थिरता बनाए रखने में सहायता प्राप्त होगी ।

इस प्रवृत्ति में यह भी तर्क दिया जाता है कि अंतरराष्ट्रीय निवेशकों के पोर्टफोलियो के विविधीकरण के परिणाम के रूप में हाल की घटनाओं का उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं की संभावना पर सकारात्मक प्रभाव होगा तथा इससे इन देशों में अच्छी स्थूल आर्थिक नीतियों को बनाए रखने हेतु और अधिक प्रोत्साहन प्राप्त होगा । वर्तमान परिस्थिति में यह आशा की जाती है कि अमेरिकी सब-प्राइम संकट का प्रभाव एशियाई बैंकों पर सीमित रहने की संभावना है तथा उसे उनकी वर्तमान रेटिंग स्थिति के भीतर ही सहजता से समायोजित किया जा सकता है । मूडीज के अनुसार एशियाई बैंकों के ऋण जोखिम (एक्सपोज़र) का बही मूल्य इतना कम है कि वह कर-पूर्व प्रावधान के पहले वाले वार्षिक लाभों के 10-35 प्रतिशत से अधिक नहीं होता । इन बैंकों द्वारा धारित बंधक पर आधारित प्रतिभूतियां और संपार्श्विक कर्ज़ देयता (सीडीओ) शेयर के हिस्से सामान्यतया पुराने (सीनियर) हैं और इसलिए हानियां, यदि वे होती भी हैं, तो 100 प्रतिशत से काफी कम रहेंगी । एशियाई बैंकों (जापान, चीन, कोरिया और सिंगापुर में स्थित बैंकों को छोड़कर) द्वारा विदेशी मुद्रा में किए गए निवेश में से अधिकांश निरंतर रूप से उच्च रेटिंग वाले सरकारी और कॉर्पोरेट बाण्डों के रूप में हैं । नीति निर्धारकों के लिए यह आवश्यक होगा कि

वे वित्तीय नवोन्मेष को संभव बनाने के प्रयासों को जारी रखते हुए बाज़ारों की प्रकृति को देखते हुए उसके विपरीत न जा कर अनुरूप कार्य करें, हालांकि उन्हें अव्यवस्थित वैश्विक पुनर्संतुलन के किसी भी अव्यवस्थित संकेत के प्रति सतर्क रहना चाहिए । भविष्य पर नज़र रखते हुए वित्तीय स्थिरता की सुदृढ़ता को और भी अधिक भविष्योन्मुखी बनाने का कार्य बाज़ार के विश्वास को अवलंब प्रदान किए जाने पर निर्भर करेगा ।

समग्र मूल्यांकन में अमेरिकी सब प्राइम से उपजी अशांति का प्रतिकूल परिणाम वित्तीय बाज़ारों की भावी स्थिरता के अत्यधिक विपरीत जा सकता है तथा उसमें उभरती बाज़ार अर्थ-व्यवस्थाओं की संभाव्यताओं पर केन्द्रित विशिष्ट चिंताओं के कारण वैश्विक संवृद्धि को व्यापक रूप से प्रभावित करने की संभाव्यताएं विद्यमान हैं। यदि ऋण की स्थितियां बिगड़ती हैं, तो पूंजी प्रवाह के विपर्यय की दृष्टि से उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाएं विशेष रूप से असुरक्षित हो सकती हैं जिसका उनकी भावी संभावनाओं पर गंभीर प्रभाव हो सकता है । पूंजी विपर्यय के साथ-साथ अमेरिकी अर्थव्यवस्था में मंदी की स्थिति का भी अमेरिकी अर्थव्यवस्था के साथ संबद्धता के स्तर के आधार पर विनिर्माताओं और सेवाओं के निर्यात को प्रभावित करते हुए संवृद्धि की दृष्टि से दीर्घकालिक आधार पर प्रतिकूल परिणाम हो सकता है । दूसरी ओर विशाखन के माध्यम से पूंजी के सुरक्षा की ओर पलायन के फलस्वरूप इन देशों को होने वाले पूंजी प्रवाह में वृद्धि भी हो सकती है । इससे मौद्रिक नीति का संचालन और भी जटिल हो सकता है । हमें प्रतीक्षा करते हुए इस पर नज़र रखनी होगी । सामान्य तौर पर वित्तीय बाज़ारों की हाल की घटनाएं उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के लिए बढ़ती अनिश्चितताओं का संकेत है, जिसमें मौद्रिक नीति के संचालन तथा उनकी अर्थव्यवस्थाओं में वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण चुनौतियां निहित हैं । केन्द्रीय बैंकरों के रूप में हमें अपनी सतर्कता को बढ़ाना होगा ।

V. मौद्रिक नीति के लिए चुनौतियां

हाल की वित्तीय घटनाओं ने मौद्रिक नीति के संचालन के संदर्भ में केन्द्रीय बैंकों के समक्ष उपस्थित गंभीर चुनौतियों, विशेष रूप से वित्तीय बाज़ारों द्वारा लागू की गई परिसीमाओं की ओर ध्यान आकृष्ट किया है । ये घटनाएं केन्द्रीय बैंकों और वित्तीय बाज़ारों के बीच गतिशील एवं जटिल संपर्क सूत्रों को प्रकाश में लाती हैं । जबकि वित्तीय बाज़ारों के गति-सिद्धांत प्रतिफल की विश्वव्यापी तलाश, जोखिमों के बारे में आत्मतुष्टि, वित्तीय नवोन्मेष तथा अभूतपूर्व चलनिधि के समुच्चय द्वारा संचालित होते हैं, वहीं अधिक स्वतंत्र, नियम-आधारित केन्द्रीय बैंकों के विस्तार में अल्पावधिक प्रबंधन की कम संभाव्यता या 'हस्तक्षेप जोखिम' की अनुभूति के माध्यम से जोखिम उठाने के कार्य को सुगम बना दिया है । यह प्रवृत्ति विशेष रूप से वैश्विक प्रणाली के भीतर आर्थिक शक्ति के संतुलन में आए बदलाव की पृष्ठभूमि के विपरीत उदीयमान एशिया के पक्ष में प्रवर्तित है ।

बहस के संबंध में कोई विचार बनाते समय वित्तीय बाज़ारों की दृश्यभूमि में हुए परिवर्तनों - वित्तीय बाज़ारों के ढांचे, प्रक्रिया और उत्पादों में रूपांतरण, बैंकिंग क्षेत्र में समेकन, वर्धित इलेक्ट्रॉनिक डाटा प्रवाह तथा परिमाण और परिवर्तनशीलता में नाटकीय वृद्धि की पहचान करना महत्त्वपूर्ण है । केन्द्रीय बैंकों के लिए प्रमुख मुद्दा है अल्पकालिक चलनिधि उपलब्धता और मध्यावधिक मौद्रिक नीति के परिचालन के बीच अंतर करना और उस अंतर को विश्वसनीय ढंग से संप्रेषित करना ।

मौद्रिक नीति का संचालन कई ऐसे कारकों द्वारा भी जटिल बना दिया जाता है जो साथ-साथ काम करते हुए लगते हैं : निरंतर संक्रमण का जोखिम; वैश्विक क्षमता का अभाव; बढ़ती खाद्यान्न कीमतें; कच्चे तेल की अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अत्यधिक कीमतें; मुद्रास्फीति की अपेक्षाओं में तनाव; विदेशी मुद्रा की प्रारक्षित निधि के प्रभावशाली समूहों का विकास, मौद्रिक नीति की

प्रभावशीलता का स्तर; चौकसी और जोखिम निगरानी प्रणालियां तथा अधोमुखी जोखिम। इस विकासशील परिदृश्य में केन्द्रीय बैंकों को मौद्रिक नीति के परंपरागत निर्धारण को कुछ ऐसे पुनर्विचार के पश्चात् लिए जाने वाले निर्णयों और गैर-परंपरागत नीतिगत विकल्पों के साथ मिश्रित करना आवश्यक लग सकता है, जिसमें समन्वित हस्तक्षेपों, सामयिक और विश्वसनीय कार्रवाई द्वारा समर्थित चलनिधि के आश्वासनों, आपाती चलनिधि आयोजना तथा संकट प्रबंधन रणनीतियों का समावेश किया जा सकता है । स्वीकार्य रूप से मुख्य अधिकार क्षेत्रों में केन्द्रीय बैंक की हाल की गतिविधियों को ध्यान में रखे जाने के बाद भी बढ़ी हुई अनिश्चतताएं बनी हुई हैं। यह स्पष्ट ही नहीं होता कि सभी संबद्ध मुद्दे स्पष्ट हुए भी हैं या नहीं, ताकि हम उनका सार्थक मूल्यांकन कर सकें ।

मुझे लगता है कि भारत में विद्यमान घरेलू स्थिति पर कुछ शब्द कहे बिना मैं इस व्याख्यान को समाप्त नहीं कर सकता । यह कार्य करने का सर्वोत्तम तरीका है मैक्सिको शहर में गवर्नर के हाल ही के व्याख्यान को उद्धृत करना।

''अब तक उपलब्ध सूचना 2007-08 में संवृद्धि के संवेग के सुदृढ़ गति से जारी रहने का संकेत देती है, जिसमें संवृद्धि के स्पंदनों को और अधिक व्यापकता प्राप्त होगी । सकल घरेलू बचत और निवेश, उपभोग की मांग दर में निरंतर वृद्धि, नयी क्षमता के परिवर्धन के साथ-साथ विद्यमान क्षमता के और अधिक गहन एवं कुशल उपयोग/पूंजीकरण से 2007-08 के दौरान संवृद्धि को समर्थन प्राप्त होने की आशा है । मुद्रास्फीति को कम करने तथा मुद्रास्फीति संबंधी अपेक्षाओं के स्थिरीकरण में हाल ही में प्राप्त सफलताओं से संवृद्धि चक्र के वर्तमान विस्तारात्मक चरण को समर्थन प्राप्त होना चाहिए । हालांकि, कच्चे तेल की ऊंची एवं अस्थिर अंतरराष्ट्रीय कीमतों, मुख्य खाद्यान्नों की कीमतों में निरंतर स्थिरता तथा विश्वव्यापी स्तर पर और भारत में भी मांग-आपूर्ति अंतरालों के विकास के इर्द-गिर्द व्याप्त अनिश्चितताओं से उद्भूत होने वाली मुद्रास्फीति की संभावनाओं का निरंतर आधार पर मूल्यांकन किया जाना आवश्यक है । वैश्विक घटनाओं से निर्मित होने वाले जोखिम, विशेषत: मुद्रास्फीतिकारक दबावों, वित्तीय बाज़ारों द्वारा जोखिमों के पुनर्मूल्य-निर्धारण तथा कुछेक आस्ति वर्गों में गिरावट के खतरे के रूप में अब भी विद्यमान हैं । अतिरिक्त विशेष सुविधा से वैश्विक वित्तीय प्रणाली की सुभेद्यता और भी बढ़ गई है । चलनिधि की स्थिति में भारी परिवर्तन से जोखिमों का मूल्यांकन सहवर्ती अनिश्चितता के साथ दुरूह होता जा रहा है । विश्वव्यापी स्तर पर वित्तीय बाज़ारों और मौद्रिक नीति के विन्यास, दोनों ही के साथ जुड़े अभिवाह (फ्लक्स) को ध्यान में रखते हुए भारत इन घटनाओं से अप्रभावित नहीं रह सकता । इस समय भारतीय रिज़र्व बैंक के समक्ष उपस्थित नीतिगत चुनौती है वर्तमान संक्रमण का प्रबंधन इस प्रकार करना कि मुद्रास्फीतिकारक दबावों की गति को रोकते हुए तथा वित्तीय स्थिरता पर ध्यान केन्द्रित करते हुए वर्तमान संक्रमण को उच्चतर संवृद्धि के मार्ग पर ले जाया जा सके । प्रसंगवश रिज़र्व बैंक में हम लोग इसीलिए विश्वव्यापी वित्तीय और मौद्रिक स्थितियों में बढ़ी हुई अनिश्चतताओं का उपयुक्त ढंग से प्रत्युत्तर देने में समर्थ होने के लिए प्रवर्धित सतर्कता बरत रहे हैं ।''